चौधरी चरण सिंह

कृषक लोकतंत्र के पक्षधर

मधु लिमये

मधुजी की पुस्तक की रिलीज के अवसर पर भाषण करते हुए चौधरी चरण सिंह और (बायें से) मधुजी, कर्पूरी ठाकुर एवं वीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य

चौधरी चरण सिंह

कृषक लोकतंत्र के पक्षधर

मधु लिमये

लिखित १९८९–९०

'मधु जी', लोहिया ट्रस्ट, लखनऊ, पृष्ट ३४१

मधु लिमये (जन्म 1 मई 1922; मृत्यु 8 जनवरी 1995) भारतीय राजनीतिज्ञ और समाजवादी आंदोलन के नेताओं में से एक थे। भारत की समाजवादी राजनीति के प्रतिनिधि नेता मधु लिमये ने चार दशक तक देश की राजनीति को कई तरीकों से प्रभावित किया। वह प्रखर वक्ता और सिद्धांतकार थे। तात्कालिक राजनीतिक स्वार्थ के समय ही सुनाई देने वाली 'अंतरात्मा की आवाज' के दौर में मधु लिमये लोकतंत्र, आडंबरहीनता और साफ सार्वजनिक जीवन के पहरेदार बन गए थे। मधु लिमये ने दुनिया को बताया कि संसद में बहस कैसे की जाती है। उन्होंने सांसद होने की पेंशन कभी नहीं ली और न ही पूर्व सांसद होने की सुविधाएं। मधु लिमये १९७९–१९८२ के बीच चौधरी चरण सिंह के लोक दाल के महासचिव थे।

कृषक लोकतंत्र के पक्षधर

आगरा और अवध के संयुक्त प्रांत (वर्तमान उतर प्रदेश) ने बीसवीं सदी के प्रारम्भ में मदन मोहन मालवीय, तेज बहादुर सप्रू, मोतीलाल नेहरू और वज़ीर हसन जैसे नेताओं की एक आकाश गंगा को जन्म दिया। लेकिन वस्तुतः गांधी–युग में यह प्रांत अपने उरूज पर आया। असहयोग आन्दोलन के दौरान जवाहरलाल नेहरू, पुरुषोत्तमदास टण्डन, गोविन्द बल्लभ पंत, आचार्य नरेन्द्र देव, सम्पूर्णानन्द, रफी अहमद किदवई और मोहनलाल सक्सेना जैसे विशिष्ट व्यक्तियों ने ख्याति पाई। जवाहरलाल नेहरू इनमें सबसे बड़े कद के नेता थे। चौधरी चरण सिंह, चन्द्रभानु गुप्त, कमलापति त्रिपाठी और बनारसी दास इन नेताओं के शिष्य थे, जिन्होंने राज्य में महत्वपूर्ण ओहदे सम्भाले।

नई पीढ़ी के नेताओं में चरण सिंह सिर्फ सबसे महत्वपूर्ण ही नहीं बल्कि कई मायनों में सबसे ज्यादा असामान्य नेता भी थे। उनके बीच चरण सिंह ही ऐसे व्यक्ति थे, जो समाजवादी विचारों से अछूते थे और ये विचार कांग्रेसी नेताओं और उनके अनुवर्तियों के सामान्य गुण थे। भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के एक बड़े नेता दादा भाई नौरोजी ने भारत स्वराज्य के संघर्ष के लिए, अन्तर्राष्ट्रीय समाजवादी आन्दोलन का समर्थन प्राप्त करने हेतु एम्सटर्डम में आयोजित सोशलिस्ट इन्टरनेशनल की कान्फ्रेंस में हिस्सा लिया था, जिसके कारण इंग्लैण्ड में उनके उदारवादी मित्र और भारत में नरमदल–वादी साथी उनसे नाराज भी हुए। दादाभाई के इस कदम की प्रशंसा करते हुए लोकमान्य तिलक ने बड़े पूंजीपतियों और जमींदारों द्वारा गरीबों के शोषण के खिलाफ विश्वव्यापी समाजवादी आन्दोलन और गुलाम भारत के प्रति इसकी सहानुभूति की बात की थी। तिलक ने यह भी कहा था कि किसी न किसी दिन समाजवादी आन्दोलन की निःसंदेह जीत होगी। उन्होंने कहा कि भारत में विदेशी नौकरशाही तंत्र से लड़ने के लिए दुनिया के समाजवादियों से मदद लेने में कुछ गलत नहीं है। तिलक के अलावा लाला लाजपत राय, चित्तरंजन दास और दूसरे पुराने नेताओं के मन में समाजवादी उद्देश्य के प्रति सहानुभूति थी। महात्मा गांधी ने, जिन्होंने कांग्रेस आन्दोलन को स्वरूप प्रदान किया, अपने आपको समाजवादी या साम्यवादी कहा। लेकिन उन्होंने यह स्पष्ट किया कि उनके समाजवाद में हिंसा, राज्यवाद और केन्द्रीकरण लेशमा

भी नहीं है। जहां तक जवाहरलाल नेहरू और सुभाषचन्द्र बोस का सवाल है, उन्होंने समाजवाद में अपनी आस्था खुले तौर पर घोषित की।

उत्तर प्रदेश की कांग्रेस समाजवादी विचारो से रंगी हुई थी और एक मौलिक कृषि कार्यक्रम के प्रति प्रतिबद्ध थी, जिसमें जमींदारी प्रथा को खत्म करना और राज्य एवं किसानों के बीच से बिचौलियों को समाप्त करना शामिल था। लेकिन यह कुछ आश्चर्य की बात है कि जहां उत्तर प्रदेश के वरिष्ठ नेता और समकालीन लोग समाजवादी विचारों से प्रभावित थे, वहीं चरण सिंह इन प्रभावों से पूरी तरह से अछूते रहे। मेरी राय में इसके दो कारण हैं। पहला, उनकी प्रेरणा के स्त्रोत सबसे पहले स्वामी दयानन्द और फिर महात्मा गांधी थे। दूसरा कारण यह था कि समाजवादी विचारों से उनका परिचय कभी भी ठीक तरह से नहीं हुआ था। वह एक गैर–औद्योगिक क्षेत्र के व्यक्ति थे और उन्होंने मुझसे कई बार यह कहा कि औद्योगिक पूंजीवाद की कार्य–प्रणाली के बारे में उन्हें ज्यादा जानकारी नहीं है। बहरहाल, वे बड़े व्यापारियों और एकाधिकारियों के प्रभुत्व के खिलाफ थे। यह उनके और समाजवादियों के बीच एक कड़ी की तरह होना चाहिए था। मगर ऐसा नहीं हुआ और इसका बड़ा कारण यह है कि उनकी सोच का मुख्य विषय औद्योगिक शोषण नहीं बल्कि कृषि सम्बंधी समस्या और सामाजिक सवाल थे।

समाजवादी दल जमींदारी प्रथा को खत्म करने के पक्ष में था। जवाहरलाल खुद इसके कट्टर समर्थक थे। चरण सिंह के मन में सरदार पटेल के लिए बहुत बड़ी श्रद्धा थी, लेकिन उन्हें मालूम नहीं था कि सरदार पटेल जमींदारी खत्म करने के पक्ष में नहीं थे। उत्तर प्रदेश में वस्तुतः जवाहरलाल, गोविन्द बल्लभ पंत, पुरुषोत्तमदास टण्डन और समाजवादियों ने कांग्रेस को, इस दिशा में कदम उठाने के लिए मजबूर किया।

जब चरण सिंह एक कनिष्ठ मंत्री बने और महान भूमि–सुधार विधेयक विधान मंडल में पारित करवाने की जिम्मेदारी उन्हें सौंपी गयी, तब तक समाजवादी कांग्रेस छोड़ चुके थे और भूमि सुधार के मामले में उन दोनों के बीच सहयोग की कोई सम्भावना नहीं थी।

चौधरी साहब भूमि सुधार कानून को बिना प्रतिक्रियावादी परिवर्तन के पास करने तथा उसको निष्फल बनाने के निहित स्वार्थों द्वारा किये गये प्रयासों के खिलाफ लड़े। हालांकि हमेशा उनकी चल नहीं पाई किन्तु इसमें संदेह नहीं कि मुख्य रूप से उन्हीं की लगन और समर्पण के कारण उत्तर प्रदेश भूमि–सुधार कानून का प्रगतिशील चरित्र बना रहा।

इसलिए चौधरी साहब को कुलकों का समर्थक कहना अन्याय है। वह जमीन के स्वामित्व के मामले में असमानता के खिलाफ थे और एक

किस्म के कृषि प्रजातंत्र के पक्षधर थे। औद्योगिक क्षेत्र में वह एक ऐसी विकेन्द्रीकृत अर्थ–व्यवस्था के पक्ष मे रहे, जिसमें बड़े पैमाने पर तकनीक का प्रयोग सिर्फ उन क्षेत्रों में सीमित हो जहां उसकी निहायत ज़रूरत है।

तब समाजवादी कार्यक्रम में ऐसा क्या था, जिस पर चौधरी चरण सिंह का आक्षेप था ? इसका कारण जमींदारी खत्म करना नहीं हो सकता था। इसका कारण पूंजीवाद का विरोध नहीं हो सकता था। इसका कारण लोहिया द्वारा छोटी इकाई की तकनीक का समर्थन भी नहीं हो सकता था। मेरी समझ में कारण राज्य द्वारा खेती और सामूहिक खेती का समर्थन था, जिससे चरण सिंह के बुनियादी मतभेद थे। जवाहरलाल ने बार–बार व्यक्तिगत खेती की जगह सामूहिक और सहकारी खेती पर जोर दिया था। प्रारम्भ में कांग्रेस–समाजवादी कार्यक्रम ने भी सामूहिक खेती का समर्थन किया, हालांकि बाद में समाजवादियों ने इस कार्यक्रम को त्याग दिया था। लेकिन चरण सिंह को समाजवादियों की नई सोच और उनके द्वारा अपने परम्परागत कार्यक्रमों के पुनर्मूल्यांकन की जानकारी नहीं थी।

चरण सिंह जानते थे कि अपने खेत से किसानों का कितना गहरा जुड़ाव है। वे जानते थे कि सामूहिक खेती मानव स्वभाव के विरुद्ध है। उन्हें विश्वास था कि सामूहिक या सहकारी खेती से उत्पादन पर बुरा असर होगा और मुल्क विनाश की ओर अग्रसर होगा।

पोलैण्ड, चीन, यूगोस्लाबिया और अब सोवियत रूस जैसे साम्यवादी देशों का अनुभव यह बतलाता है कि चौधरी साहब की राय सही थी। खेती के जबरन समूहीकरण से सोवियत कृषि को पहुंची हानि से उबारने के लिए सोवियत सुधारक 1953 से भरसक कोशिश कर रहे हैं। लेकिन वे सफल नहीं हो पाये, क्योंकि उन्होंने व्यवस्था में मौलिक सुधार किये बिना ही सुधार लाने की कोशिश की। सामूहिक किसानों को जमीन के छोटे–छोटे टुकड़े देने की सोवियत पद्धति काफी पुरानी है। जमीन के इन टुकड़ों की, जिन पर किसान फल के पेड़, सब्जियां लगाते थे और मुर्गी, सुअर, गाय आदि पालते थे, उत्पादन क्षमता हमेशा बहुत ज्यादा रही है। फिर भी सोवियत नेताओं ने इससे आवश्यक सीख नहीं ली। बुरे हाल में फंसी सोवियत कृषि को बचाने के लिए गोर्वाचेव हिम्मत के साथ प्रयास कर रहे हैं। सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी के जून–जुलाई में हुए सम्मेलन में कई वक्ताओं ने यह विलाप किया है कि 'ग्रामीण क्षेत्र तबाही में है।' गोर्वाचेव ने अब पट्टेदारी पद्धति के प्रयोग की बात चलाई है। यह और कुछ नहीं बल्कि पिछले दरवाजे से जिनी सम्पत्ति की व्यवस्था को लागू करना है। लेकिन मूल्य की गारंटी, ऋण देने वाली संस्थाओं और कृषि से सम्बद्ध एजेंसियों से आवश्यक मदद के बिना पट्टेदारी से प्राप्त जमीन

पर बचत का धन कौन खर्च करना चाहेगा? निःसंदेह गोर्वाचेव के रास्ते में कई मुश्किलें हैं, मगर इस सोवियत प्रयोग से बहुत उम्मीदें हैं और इससे यह पता चलता है कि चरण सिंह द्वारा समूहीकरण और सहकारीकरण का विरोध दुराग्रहपूर्ण नहीं था। सहकारी खेती पर जवाहरलाल नेहरू द्वारा प्रायोजित नागपुर प्रस्ताव (1959) का चौधरी साहब ने साहसपूर्ण विरोध किया था, जो मृत–पत्र ही रहा है। इससे भी चरण सिंह की समझ सही साबित होती है।

सामाजिक–सांस्कृतिक नीति के क्षेत्र में चरण सिंह के विचारों में कुछ विरोधभास या अन्तर्विरोध रहे हैं। जहां वे हिन्दू एकता के विचारों से आकर्षित हुए थे, वहीं उन्होंने परम्परागत श्रेणीबद्ध जाति–व्यवस्था, जिसके कारण निम्न श्रेणी के लोग निकृष्ट माने जाते थे, को पूर्णतया अस्वीकार किया। चरण सिंह ब्राह्मणवाद और उसकी अवधारणाओं के खिलाफ थे। जनसंघ–भाजपा और आर.एस.एस. के साथ उनके संदिग्ध सम्बंध का मुख्य कारण यही था। हिन्दुओं और गौरवपूर्ण अतीत की उनकी बातें उन्हें उनकी ओर खंचती थी, लेकिन उनके उच्च जातीय भारी अक्खड़पन के कारण चरण सिंह का आकर्षण विरोध में बदल गया। वर्ण की पवित्रता का पक्ष लेना उनकी दूसरी अस्पष्टता थी। चूंकि हिन्दू सामाजिक व्यवस्था का सार तत्व जाति है। जाति संस्था का विरोध और हिन्दू सुदृढ़ीकरण के प्रति जुड़ाव के बीच का विरोधभास, कम से कम अल्पकाल में, खत्म नहीं हो सकता। चूंकि चरण सिंह ने वर्ण–व्यवस्था को स्वीकारा था, डा0 अम्बेडकर, जो जन्म पर आधारित वर्ण और जाति व्यवस्था में कोई भेदभव नहीं देखते थे, के अनुयायी उन्हें प्रतिक्रियावादी मानते थे। और इसलिए वे उनका विश्वास नहीं जीत पाये। अन्तर्जातीय और अन्तर साम्प्रदायिक विवाहों को गैर–जरूरी ही नहीं, हानिकारक भी माना। बाद में उन्होंने पूरी तरह से अपने विचार बदल दिये और ऐसे मिश्रित विवाहों के कट्टर समर्थक बने। चौधरी साहब भी मिश्रित विवाहों के बड़े समर्थक थे और इसलिए मेरी राय में उन्हें जातिवादी कहना अन्यायपूर्ण होगा।

हालांकि कृषक लोकतंत्र और विकेन्द्रीकृत अर्थ–व्यवस्था में उनका गहरा और ईमानदार विश्वास था। उन्होंने महसूस किया कि सत्ता के बगैर कुछ भी नहीं किया जा सकता। इसलिए वह सत्ता चाहते थे और उसे पाने के लिए उन्होंने विरोधासी गठबंधन भी किये। गैर–कांग्रेसी पार्टियों और कांग्रेस (1967 और 1970), दोनों के साथ उन्होंने सम्बंध बनाये। फिर भी आम कांग्रेसियों की तरह वे खालिस रूप से सत्ता के पीछे भागने वाले राजनीतिज्ञ नहीं थे। चूंकि वे अपनी आस्थाओं और कार्यक्रमों से गहरे रूप से जुड़े हुए थे, सत्ता में आने पर उन्हें लागू करने में वे कभी नहीं झिझके,

और इस प्रक्रिया में उन्होंने पदच्युत होने का खतरा भी मोल लिया। यही कारण है कि वे अपने पदों पर हमेशा थोड़े समय के लिए रहे– जैसे 1967–68, 1970, 1977–78 तथा 1979 में। जब भी कभी वे किसी पद पर रहे, एक सशक्त और ईमानदार शासक के रूप में उनकी ख्याति रही और वे कामचोर कर्मचारियों के सिरदर्द बने रहे।

हालांकि चरण सिंह के व्यक्तित्व का विकास गांधी–युग में हुआ और वे कई बार जेल गये थे। उनका विचार था कि लोकतंत्र में नागरिक अवज्ञा के लिए कोई जगह नहीं है। अन्याय के निदान के लिए सरकार को वोट के जरिये बदलना चाहिए, ऐसी उनकी मान्यता थी। हम लोग उनके इस विचार से कतई सहमत नहीं थे। चौधरी दुराग्रही नहीं थे और उनकी राय बदलवा पाने में मैं सफल हुआ। अंतिम वर्षों में उन्होंने इस बात की जरूरत को स्वीकार किया कि प्रत्यक्ष बुराइयों को दूर करने के लिए शांतिपूर्ण संघर्ष आवश्यक है। ऐसा एक अवसर माया त्यागी का वीभत्स प्रसंग था। जब सरकार पर हमारे प्रतिवेदनों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा, तब उन्होंने सत्याग्रह के लिए मुझे और दल को न सिर्फ अपनी स्वीकृति दी, बल्कि एक लेख भी लिखा, जिसका शीर्षक था– ''सत्याग्रह की घड़ी''। वे खुद इस सत्याग्रह में हिस्सा लेना चाहते थे, लेकिन कुछ पक्षपाती लोगों ने उन पर अनुचित दबाव डाला और उनके सहज बोध को कुंठित कर दिया। आज इस घड़ी में, जब विपक्षी पार्टियों के बीच एकता की आवश्यकता व्यापक पैमाने पर महसूस की जा रही है, चरण सिंह का व्यावहारिक ज्ञान और विपक्षी एकता का उनका कट्टर समर्थन, राजनीतिक व्यक्तियों के लिए प्रेरणा स्त्रोत होगा।

———